शोध मंथन, 2018 ISSN: (P): 0976-5255, (e) : 2454-339X, Impact Factor 5.463 (SJIF)
UGC Approved Journal No. 40908

उत्तराखण्ड जनजातीय समाज की संस्कृति एवं सामाजिक परम्परायें

डॉ0 निरंजना शर्मा

एसो0 प्रोफे0, राजनिति शास्त्र विभाग, रा0 स्ना0 महाविद्यालय, नई टिहरी

सारांश

मानव जाति प्रजातीय, सांस्कृतिक एंव भाषायी दृष्टि से निरन्तर बढ़ती हुई सजातीयता की ओर अग्रसर ही रही है। प्राचीनतम संस्कृतियाँ या तो मृतप्रायः है अथवा समाप्त हो रही है। प्राक औद्योगिक अर्थव्यवस्था, अपरिष्कृत अनुष्ठान तथा समाजिक प्रथायें अपनी विकसित बोली संस्कृति के लिए स्थानीय सामुदायिक समाज को सुरक्षित रखने के लिए सदैव प्रयत्नशील है। कल की जनजातियां अपने अधिक सभ्य पडोसियों के सम्पर्क में आने से अपने प्राचीन स्वरूप को खोती जा रही है। इन संस्कृतियों व सभ्यताओं को शहरीकरण, नगरीकरण, औद्योगिककरण तथा वैश्वीकरण के प्रभाव से संशोधित सभ्यता का नाम दिया जाने लगा है। वाडले के अनुसार सभ्यता की प्रगति पर्यावरण के साथ–साथ समाजों व संस्कृतियों का भी विनाश कर रही है। यद्यपि वर्तमान भौगेलिक व सामाजिक संरचना में परिवर्तन के कारण पलायन व रोजगार की समस्या, उत्तराखण्ड राज्य बनने के बाद प्राकृतिक आपदाओं ने जनजीवन को प्रभावित किया है। जिससे जल, जंगल व जमीन के अस्तित्व को बनाये रखने के लिये कठिन संघर्ष करना पड रहा है। शिक्षा व नौकरियों में आरक्षण की व्यवस्था के कारण इस समाज में आर्थिक सम्पन्नता आयी है। जो कि पूर्व से ही प्राकृतिक सम्पदा व सामाजिक सरोकारों के कारण सुदृढ़ थी। उत्तराखण्ड में पाँच जनजातियों निवास करती है। जिनमें थारू, बोक्सा, भोटिया, जौनसारी तथा राजी है। इनमें से बोक्सा व राजी जनजाति को आदिम जनजाति का दर्जा प्राप्त है। शेष थारू, भोटिया व जौनसारी जनजातियां अनुसूचित जनजातियों में सम्मिलित है। प्रत्येक का सांस्कृतिक जीवन अपने आप में विविधता पूर्ण है। इनके आर्थिक, सामाजिक, राजनीतिक जीवन में समरसता विद्यमान है। धार्मिक आधार पर परम्परावादी तथा रूढ़िवादी विचाराधारा का वर्चस्व है। महिलाओं को जनजातिय समाज में सम्मानजनक स्थान प्राप्त है। जनजाति की संस्कृति समता, सहयोग तथा बंधुत्व की भावना समतामूलक तथा तनाव रहित समाज का निर्माण करती है।

शोध पत्र का संक्षिप्त विवरण निम्न प्रकार हैः

डॉ0 निरंजना शर्मा

उत्तराखण्ड जनजातीय समाज की संस्कृति एवं सामाजिक परम्परायें

शोध मंथन, जून 2018, पेज सं0 19–25

Article No. 4
http://anubooks.com
?page_id=581

मानवीय सृष्टि मे उसके लोकजीवन के आयामों का क्षेत्र अपरिमित एवं अपरिमेय है। सामाजिक व संस्कृतिक परम्पराओं को स्थान तथा काल विशेष की परिधि में संचलित किया जाता है। इसको नियामक तत्वों को जीवनचर्या, देशाचार, लोकाचार आदि नामों से जाना जाता है। आस्थायें, विश्वास, परम्परायें व्यक्ति के जन्म की प्रक्रिया से लेकर ऐहलौकिक जीवन की समाप्ति तक सामाजिक व धार्मिक क्रियाकलापों से इस प्रकार सम्बन्ध है, कि उनका विस्तृत समाकलन व परिगणन करना सम्भव नही है। किन्तु समाज व विभिन्न प्रजातियों के लोग अपनी विशेष भौगोलिक परिस्थियों के बीच परम्पारिक सम्बन्धों से कटे हुए अपनी परम्परागत सामाजिक व संस्कृति परम्पराओं का अनुपालन करते आर रहे हैं। उत्तराखण्ड की संस्कृति में लोकोत्सव, पर्वोत्सव देवी देवीताओं, लोकलाओ, लोकरंजन के रूपों की भूमिका अतुलनीय है। जनजातीयेतर समाजों में प्रचलित अपनी विशिष्ट सामाजिक व सांस्कृतिक परम्पराओं के समान ही उत्तराखण्ड के विभिन्न जनजातीय समाजों की अपनी विशिष्ट परम्परायें रही है। जिसमें से अधिंकाश आधुनिककरण के प्रभाव में लुप्त होने लगी है किन्तु कुछ अभी भी प्रचलन में हैं।

भौटान्तिक वर्गः–

पूर्व भौटान्तिक वर्ग की कुछ सामाजिक सांस्कृतिक परम्परायें रड–बड, आंतडा बेडना तथा ढोंरग व धागा काटना है जो कि अब ह्रास पर है इसके अतिरिक्त अन्य उल्लेखनीय परम्परायें दादा के नाम पर, पोते का नाम, विवाह में सगाई के लिए महिलाओं का एक घडा **शराव व फाफर की रोटियां** लेकर लड़की के पिता के घर जाना, विवाह के दिन महिलायें दूल्हे को लेकर दुल्हन के घर आती है विवाह पश्चात दामाद अपने ससुर को 20रू व एक थान कपड़ा भेंट करता है। कन्या को दहेज व दान की प्रथा नहीं थी किन्तु शिक्षा सामाजिक प्रगति तथा राजकीय सेवाओं में आरक्षण के फलस्वरूप ये प्रथायें अतीत का विषय बन रही है। इस वर्ग के दारमा, चौदास व्यास में शिशु जन्म से 10–11 दिन तक माँ के साथ दूसरों के घर में जाना है, तथा घर वापसी के संस्कार को मिलिन खू कार्मो कहा जाता है। "भोटिया जनजाति" के लडके के विवाह में आज भी बधू को लेने दूल्हा नहीं जाता अपितु वर पक्ष के लोग दुल्हन के लिए वस्त्र लेकर जाते है। वधु को लेकर वधु पक्ष के लोग आते है जिन्हें अतिथि कहा जाता है। तत्पश्चात् विवाह की सारी रस्में वर के घर में ही सम्पन्न होती है उसे नॉस्या कहा जाता है। डॉ0 रायपा के अनुसार इसका शब्दिक अर्थ विश्राम होता है। जिसमें दूल्हा अपने मित्रों के साथ ससुराल जाता है तथा वहां पर देवी देवताओं का पूजन, सम्मान तथा आर्शीवाद की समस्त परम्पराओं का निर्वाह किया जाता है।

विशिष्ट परम्परायें– (दुग्ध मूल्य)

तिब्बत के भोटिया व नेपाल के मेवारो के समान ही उत्तराखण्ड के पूवी। भौटान्तिक समाज में कन्या की माँ को उसके दूध का मूल्य चुकाने की परम्परा रही है। किंचित धनराशी जिसे "येर" कहा जात है कपडे में बांध कर दी जाती है। पूर्वी शौका वर्ग में प्रचलित आतडा–वेडना जैसी अनोखी सामाजिक परम्परा के सम्बन्ध में कहा जाता है कि जब दो समूह या समुदायों के मध्य किसी कारणवश शत्रुता हो जाती है तो यह रस्म वरती जाती है जिसमें पंचायत जुडती है तथा मदिरा– मांस इत्यादि के सेवन के बाद अन्य पारम्परिक कार्यों का निर्वाह करने के पश्चात् मित्रता हो जाती है। उत्तराखण्ड के पूर्वी शौका वर्ग में प्रचालित बढानी–बुढानी का अपना महत्व है। यह

उत्सव ज्येष्ठ पुत्र को 20 वर्ष की आयु के लगभग उसे सामाजिक मान्यता प्रदान करने के लिए जाता है। इस प्रकार पर **झुम्का नृत्य** का आयोजन किया जाता है। एक अन्य प्रथा के अनुसार विवाह विच्छेद से सम्बन्धित सामाजिक परंपरा को धागा काटना कहते थे। जिसमें केवल महिलाओं को धर्म मांगने का अधिकार होता था जिसे विभिन्न परिस्थितियों में समाज के गणमान्य जनों की उपस्थिति में धागा काटकर या तिनका तोड़कर सम्पनन किया जाता है। यह परम्परा दारमा के भोटक्तियों में प्रचलित थी। 20वीं सदी के पूर्वाद्ध तक इस वर्ग में एक उपयोगी परम्परा प्रचलित थी जिसे रडबडच्पिम् के नाम से जाना जाता था वह ऐसी संस्था थी जिसके माध्यम से युवक–युवतियां स्वतं रूप से अपनी इच्छानुसार अपने जीवन साथी का चुनाव कर सकते थे। यह संस्था शौका समाज का एक अभिन्न अंग हुआ करती थी। वर्तमान समय में कतिपय राजनीतिक परिवर्तनों से इसकी परम्परागत जीवन पद्धति के विच्छिन हो जाने से आजीविका हेतु अपने मूल स्थानों से विस्थापित हो जाने सें इसके क्रियाकलापों में कतिपय विकृतियां आ जाने एवं शिक्षित शौका समाज के द्वारा इसे अवांच्छनीय समझे जाने से यह संस्था भी विछिन्न हो गयी। शौका शिष्टाचार का अभिन्न अंग है सोमरस, इस समाज में अपनी परम्परा के अनुसार अतिथियों के गृह प्रवेश करते ही उनके सत्कार को सोमरस, इस समाज में अपनी परम्परा के अनुसार अतिथियों के गृह प्रवेश करते ही उनके सत्कार को सोमरस प्रस्तुत किया जाता है। व्यक्तिगत स्तर पर शिष्टाचार के अनेक रूप सर्वथा अनुकरणीय है व्यक्तिगत शुभकामना के अतिरिक्त सामोहिक रूप से भी मंगल कामना अभिव्यक्त की जाती है, जिसे शौकुनू या शुकन् कहा जाता है। पारम्परिक शिष्टाचार के सन्दर्भ में उल्लेख है कि समाज द्वारा निर्धारित ये प्रयास न केवल परिवार एवं समाज विशेष की सांस्कृतिक परम्पराओं की पृष्टभूमि को भी उजागर करते है।

भोजन सम्बन्धी शिष्टाचार में परोसे गये थाल को धरती पर रख कर खिसकाना अशिष्टता है। भोजन परोसने का कार्य परिवार के वरिष्ट सदस्य ही करते थे। भोजन परोसने से पूर्व प्रत्येक भोज्य पदार्थ का अंश देवी–देवताओं व मृतमाताओं को अर्पित किया जाता है भोजन की समाप्ति के उपरान्त प्रत्येक थाली में भोजनांश विशेष स्वामी भक्त कुत्तों के लिये रखा जाता है। जिसे "ख" (कुत्तो का हिस्सा) कहा जाता है। जनजातीय समाज की र को नोक्सम के सम्बन्ध में कहावत है कि "आक्थ मों यरवा मालथे मी पा वा" अर्थात् विद्धान एवं योग्य व्यक्ति को सम्मानित स्थान तथा धनवान व्यक्ति को सामान्य स्थान। सभी सभाओं व उत्सावों में बुर्जुगों को सम्मानित स्थान पर बैठने के लिए कहा जाता है चाहे वह निर्धन, अशिक्षित ही क्यों न हो। प्राचीनकाल में शौका समाज की महिलायें व युवतियों सिर पर सदैव ओढनी ओढे रहती थी। पुरूष हमेशा चोला व वक्खु पहनकर रखते थे। दो व्यक्तियों की बातचीत तीसरे का बोलना, किसी बर्तन, खाद्य पदार्थ, वस्तु या किसी बैठे व्यक्ति को लांघकर जाना, दूसरे के स्थान पर बिना पूछे बैठ जाना किसी के द्वारा प्रदत्त सामग्री को एक हाथ से ग्रहण करना आदि असभ्यता की निशानी मानी जाती थी। किन्तु आधुनिकता के प्रभावान्तर्गत ये सारी बातें अतीत का विषय होती जा रही है। पूर्वी शौका वर्ग का अन्येष्टि संस्कार एक महत्वपूर्ण अनुष्ठान है। **इसे ग्वन तथा ढुरिड/ढोरड** कहा जात है, इसमें चवर गाय की विशेष भूमिका होती है। किन्तु अनुपलब्धता के कारण इसके स्थान पर तिब्बती भेड याव्याकर को स्थानापन्न कर दिया गया। 1962 में भौटान्तिक का तिब्बत से सम्पर्क विच्छिन्न हो

जाने से इस व्यवस्था में परिवर्तन कर दिया गया तथा आर्य परम्परा के धार्मिक अनुष्ठान श्राद्ध को अपना लिया गया। धीरे–धीरे परम्परागत स्वरूप में परिवर्तन होने लगे है।

पश्चिमी भौटान्तिक वर्गः–

चमोली जनपद के नीति–भान के निवासिंयो को तोल्छा तथा मार्छा जनजाति के नाम से जाना जात है। दारमा– जोहार के भौटान्तिक के साथ रहने से इसकी अधिकतर सामाजिक सांस्कृतिक परम्परायें समान है। किन्तु स्थान के परिवर्तन के फलस्वरूप कतिपय भेद है इसी क्रम में लगोंठा–पोणा ऐसी परम्परा है जिसका वैवाहिक लोगाचारों में महत्वपूर्ण स्थान है। जब तक दोनो पक्षों के बीच सगून लगोंठा (बकरी के मांस का टुकडा) नहीं बांटा जाता तब तक कार्य शुभ नहीं माना जाता। काडच्यूलो रस्म में वर पक्ष की ध्याणियॉ (विवाहित कन्यायें) किसी सार्वजनिक स्थान पर एक थाली में अक्षत व पीली पिठांई एवं एक कांसे के लोटे में जांड (जांड एक मादक पेय) लेकर स्वागत के लिए एकत्र हो जाती है। गुरूबैंणी–गुरूभाई नीति–माणा के मार्च्छा लोगो की एक महत्वपूर्ण सामाजिक संस्था हो। इसका उद्देश्य समाज में सामाजिक स्तर पर युवक–युवतियों के बीच परस्पर भाई–बहिन के स्नेह सम्बन्धों को बनाकर उन्हें समाज हित में सुदृढ़ करना है। यातायात व संचार साधनों की सुलभता पर्यटकों का हिमालयी क्षेत्र के प्रति सम्मोहन, अन्य क्षेत्रीय सामाजिक व सांस्कृतिक परम्पराओं का प्रभाव, आधुनिकीकरण, भूमण्डलीकरण, संस्कृति व परम्पराओं के प्रति जनमानस की अवेहलना आदि ऐसे कारण है जिससे अनेक परम्पराओं का या तो विलोपन हो गया है या विलुप्ति के कगार पर है।

पश्चिमोत्तर जनजाति वर्गः–

उत्तराखण्ड के जनजातीय क्षेत्रों की सामाजिक एंव सांस्कृतिक परम्पराओं की दृष्टि से इसके पश्चिमोत्तर जनजातीय क्षेत्रों देहारादून के जौनसार बाबर तथा गढ़वाल के टिहरी एवं उत्तरकाशी जनपदों के परगनों रवाई–जौनपुर का अपना विशिष्ट स्थान रहा है। इनकी कतिपय विशिष्ट सामाजिक तथा सांस्कृतिक परम्परायें महत्वपूर्ण है। **पौणा प्रथा–** के अन्तर्गत विशेष पर्वोत्सवो जैसे मरीज (मकर संक्रान्ति) बग्वाली (दीपावली) थौल (बैशाखी) आदि अवसरों पर अपने रिश्तेदारों तथा नातेदारों को आमन्त्रित करते है। सामोहिक नृत्य गीतों के माध्यम से आमोद–प्रमोद की परम्परा को बनाये रखते है। ब्यूरा प्रथा भी उल्लेखनीय प्रथा है जिसका शाब्दिक अर्थ सलाह है। जौनसार के समान ही बहुपत्नी तथा बहुपति प्रथाओं का प्रचलन होने के कारण संयुक्त परिवार में सौहार्द व सामन्जस्य बनाये रखने के लिए इस प्रकार की परम्पराओं का विशेष महत्व होता है। यद्यपि वर्तमान समय में शिक्षा, व्यवसाय, नगरीयकरण, शहरीकरण जैसी नवीन सामाजिक व्यवस्थाओं के चलते बहुपत्नी व बहुपति विवाह का प्रचलन समाप्त ही हो गया। मातृसत्तात्मक व्यवस्था होने के कारण इन समाजों में ज्वाड प्रथा को भी प्रचलन में लाया गया। महिलाओं को यहाँ पर विशिष्ट सामाजिक वर्चस्व प्राप्त है। इस सन्दर्भ में सुरेन्द्र पुण्डीर का कथन है कि नारी प्रधान समाज होने के कारण पहले कवीलों की सत्ता पुरूषों के हाथों में स्थानान्तरित होती चली गयी, जब समाज में बदलाव व परिवर्तन का युग आया तो तत्कालीन सयाणो व बुजर्गो ने ऐसी व्यवस्था बनायी जिससे समाज के बदलने के बाद भी वे परम्परायें जीवित रहें। अतः जौनपुर की ज्वाड प्रथा महिलाओं के आर्थिक अधिकार है। इसी क्रम में बाँटा, समौण जैसी प्रथायें भी प्रचलित

है। जिनमें पैत्रिक सम्पत्ति में का हिस्सा दिये जाने की बात कही गयी है इसी प्रकार लडकी के मायके से ससुराल जाने पर उसे समोण दी जाती है। जौनपुर के खर्शो में मृतक संस्कार के सम्बन्ध में जो एक विशिष्ट पंरम्परा है। सर्वप्रथम मृत की सूचना मिलते ही मृतक के सम्बन्धी एक विशेष धुनता के साथ ढोल बजाते हुए मृतक के घर पंहुचते है जिसे ढकियारी कहा जाता है। जौनपुर की वैवाहिक परम्परा के सम्बन्ध में उल्लेख मिलता है कि जौनसार के समाज के यहाँ बारात वर की ओर से नहीं बधु की ओर से जाती है। इसी परिपेक्ष में **छूट–प्रथा** का भी उल्लेख मिलता है। इसमें यदि कोई विवाहिता अपने पूर्व पति से सम्बन्ध विच्छेद करना चाहती है तो वह अपने पिता के घर चली जाती है। अनुरोध पर भी वापस न आने की स्थिति तथा अनुकूल पति मिल जाने पर तथा लडकी की स्वीकृति हो जाने पर ससुराल वालों को सूचना दी जाती है। पंचायत में फैसला लडकी के पक्ष में ही होता है। इन परम्पराओं से पृथक आश्विन मास में श्राद्ध पक्ष की अमावस्या को वे लोग पित्रोस मनाते है। उस दिन वॉस की पिटारी में रखे पितरो को निकाला जाता है तथा उनका पूजन फूल, कुश, विभिन्न पकवानों द्वारा किया जाता है। इसके अतिरिक्त वहाँ आदमी की मृत्यु पर पुत्र एक वर्ष तक पैर में जूता नहीं पहनता है, माँ की मृत्यु पर दूध का प्रयोग नहीं करते है। ये परम्परायें कुमाँउ व गढ़वाल अंचल के लोगों में भी प्रचलित है। इसके साथ ही असमय अल्पमृत्यु से मरे बच्चों को हत्या कहा जाता है तथा पित्रोस के दिन उनकी पूजा होती है। इसी प्रकार सांप के काटने पर, गिरने पर स्त्री अथवा पुरूष की मृत्यु होने पर उसकी आकृति को लकडी पर उकेर कर पहाड की चोटियों पर पीरामिड की आकृति बनाकर पत्थरों के बीच रखा जाता है। इसके अतिरिक्त परिवारिक व्यवस्था स्त्री पुरूष कार्य विभाजन आथित्य सत्कार, वैवाहिक लौकाचार, पल्ला जाडे न्याय व्यवस्था रहने का सम्मान जैसी अनेकानेक सामाजिक व सांस्कृतिक परम्पराओं का प्रचलन भी इसी समाज में है।

परिवारिक व्यवस्था जौनसारी लोकजीवन तथा लोकपरम्परा का एक आदर्श रूप है। भोजन सम्मिलितह रूप से किया जाता है किसी सदस्य का अकेले भोजन करना इस समाज में अच्छा नहीं समझा जाता। स्त्री पुरूष कार्य विभाजन की दिशा में शारीरिक श्रम से सम्बन्धित समस्त कार्यों का सम्पादन पुरूषों के द्वारा किया जाता है। भारतीय सांस्कृतिक परम्परा के आदर्श अतिथि देवो भवः की संकल्पना का यदि साक्षात प्रत्यीकरण जौनसार लोकसंस्कृति में देखा जा सकता है। स्थानीय अतिथिपरक परम्परा के अनुसार जब अतिथि घर में पहुँचता है तो घर विशेष का नाम लेकर आवाज लगाता है औ..... तम्बाकू भी देउ क्या तम्बाकू मिलेगा यही से आतिथ्य सत्कार प्रारम्भ हो जाता है। वैवाहिक लौकाचार की परम्परा में जौनपुर की भान्ति ही जौनसार बाबर भी बारात वधु पक्ष की ओर से ही जाती है। समस्त संस्कारो के सम्पन्न होने पर पल्लाजोड की रस्म होती है तथा साथ ही दूधाभाती की रस्म की जाती है। विवाहिता कन्याओं को सम्मान देने की प्रथा भी प्रचलित है यद्यपि वर्तमान पीढी को नवयुवक व युवतियां इन प्रयासों व परम्पराओं का निर्वहन उनके मूल रूप में नहीं करते है किन्तु पीढी दर पीढी उनको जीवित रखने का प्रयत्न किया जाता है। पंचायती राज व्यवस्था स्थापित होने से पूर्व खेतों में तथा न्याय व्यवस्था खुमारियों में विभक्त थी। बिट्रिश काल में इसे चौतुरूओं को सौंप दिया गया था। खत के प्रमुख की सदर सयाना तथा सहायक को "खाक सयाना" कहा जाता था। मामलों व विवादों का निर्णय इसके अन्तर्गत किया जाता था इसमें विलम्ब नहीं होता था। इसके अतिरिक्त देवी न्याय की अनेक

परम्परायें प्रचालित थी जिसमें लूण–लोटा, तेल–लोटी, फणवाशा, दुणाउट तथा विषपरीक्षण मुख्य थे।

दक्षिणालय जनजातीय वर्गः–

उत्तराखण्ड के दक्षिण में थारू–बुक्सा भी सामाजिक गठन के आधार पर यद्यपि पितृसत्ता प्रधान जनजातियां है किन्तु इसमें नारी की सशक्त सामाजिक भूमिका को देखते हुए मजूमदार आदि अनेक समाजशास्त्रियों ने इसे मातृसत्ता प्रधान होने की सम्भावना व्यक्त की है। वास्तविकता चाहे कोई भी हो किन्तु इन समाजों में नारी की स्थिति यहां के मैदानी तथा पर्वतीय क्षेत्रों के समाज की महिलाओं की तुलना में उच्चतर रही है थारू समाज में नारी की स्थिति पुरूष की तुलना में श्रेष्ठ है। घर तथा बाहर सभी कार्यों में उनका वर्चस्व देखा जा सकता है चल–अचल सम्पत्ति पर स्त्रियों का स्वामित्व व एकाधिकार होता है। यद्यपि सामाजिक स्थिति में परिवर्तन आ गया है। आधुनिक विश्व का प्रबुद्ध समाज जहां नारी का उत्पीडन तथा उसकी दीनहीन स्थिति से उबार कर उसे समाज में सम्मान दिलाने में प्रयत्नशील है वही स्त्री प्रधान समाज से ग्रस्त थाडू पुरूष वर्ग अपनी सामाजिक स्थिति उन्नत करने के लिए थाडू जाति सुधार सभा एवं राणा महासभा जैसी नवगाठित संस्थाओं के माध्यम से महिलाओं की परम्परा प्राप्त सामाजिक बरीयता की व अनेक विशेषधिकारों को सीमित करने के लिये प्रयत्नशील है। यद्यपि इसमें सुधार की सम्भावनायें कम है थाडू समाज में मैत्री सम्बन्ध एक महत्वपूर्ण परम्परा है। इसकी स्थापना उपहारों की एक आनुष्ठानिक औपचारिकता को सम्पन्न किये जाने पर की जाती है। इस परम्परा का निर्वाह वैवाहिक सम्बन्धों को स्थापित करने के लिए होता है। उत्तराखण्ड के तराई क्षेत्र तथा पश्चिमी नेपाल के थाडुओं में एक अन्य अनोखी वैवाहिक प्रथा प्रचलित रही है। कन्या के विदाई अवसर पर उसे एक जलता दिया तथा विष का व्याला दिया जाता है जिसे मध्यकाल में राजपूताना घरानों में प्रचलित मान्यता का अंश माना जाता है जिसका अभिप्राय था कि यदि मार्ग में बहुहरण या किसी संघर्ष में पति की मृत्यु हो जाये तो दीपक की उस पवित्र अग्नि से पति की चिता को अग्नि देने के साथ ही सती हो जाय, यदि हरण हो जाय तो विषपान कर लो इस परम्परा में कहीं न कहीं सतीत्व की रक्षा का अंश विद्यमान था यद्यपि सती होना तथा विषपान करना नैतिक कार्य नही कहा जा सकता था। स्त्रियां स्वयं को राजपूतानियां समझती है। अतः वे इस परम्परा का निर्वाह करती है। यद्यपि आज मध्यकालीन समाज की सामाजिक व्यवस्था संसोधित रूप में व्यवस्थापित की गयी है।

बुक्सा समाज में भी स्त्रियो की स्थिति पुरूषों की तुलना में उच्चतर है सामाजिक परम्पराओं के अनुसार बुक्सा महिलाओं को अपने पति को निर्देशित करने का पूर्ण अधिकार होता है। सामाजिक व आर्थिक क्रियाकलापों में महिलाओं की सम्मति आवश्यक है, पुरूष उसके विरूद्ध कोई निर्णय नहीं लेता। जीवनसाथी के चयन व विवाहविच्छेद के क्षेत्र स्त्री की सहमति का स्थान महत्वपूर्ण है। पुरूष अपनी पत्नी से उस समय तक सम्बन्ध विच्छेद नहीं कर सकता जब तक स्पष्ट कारणों को अपनी जनजातीय पंचायत द्वारा इसकी अनुमति न मिल जाय इस समाज में बहुपत्नी विवाह की परम्परा नहीं पायी जाती है।

भारत विविध संस्कृतियों, सभ्यताओं, परम्पराओं, प्रथाओं, मान्यताओं, रीतिरिवाजो, भौगोलिक विभिन्नताओं समाजिक व सांस्कृतिक विरासतों का धनी खण्ड है। इसके अधिकांश भागों की जनजतीय सामाजिक व सांस्कृतिक पहचान के साथ ही उत्तराखण्ड की अनेक जनजातीय परम्पराओं, प्रथाओं सामाजिक व सांस्कृतिक स्वरूप इतिहासकारों, लेखकों साहित्यकारों व पर्यटकों को आर्कषित व प्रभावित करते रहे है। 21वीं सदी की बदलती हुयी सामाजिक राजनैतिक शैक्षणिक परिस्थितियों में यद्यपि आवश्यकता अनुरूप इसमें परिवर्तन किया है। किन्तु फिर भी अधिकांश जनजातीय समाज अपनी परम्पराओं व प्रथाओं के माध्यम से अपनी पहचान बनाये रखने में अक्षम व प्रयत्नशील है। भविष्य में जनजातीयों की परम्पराओं व प्रथायें अपने आधुनिक व पुरातन स्वरूप में विकसित व पल्लवित होगी।

सन्दर्भ

1. *उत्तराखण्ड का लोकजीवन एवं सस्कृति* –प्रो0 डी0 डी0 शर्मा
2. *उत्तराखण्ड के भोटान्तिक* –शिव प्रसाद डबराल
3. *जोनसारी बाबर* –रतन सिंह जोनसारी
4. *हिमालयी लोक संस्कृति के स्त्रोत* –वंशीराम शर्मा
5. *हिमालय संस्कृति के मूलाधार* –प्रो0 डी0 डी0 शर्मा
6. *उत्तराखण्ड का सांस्कृतिक इतिहास* –शिव प्रसाद नैथानी
7. *उत्तराखण्ड का ऐतिहासिक भूगोल* –तारादत्त त्रिपाठी
8. *उत्तराखण्ड का इतिहास* –शिवप्रसाद डबराल
9. *मध्य हिमालय की हिरासत में ग्रामीण जनसंघर्षो का इतिहास* –राधे श्याम बिजल्वाणरवाल्टा
10. *भारतीय संस्कृति का विकास* –डा0 हेत सिंह बघेला